❀ श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः ❀

स वै पुंसां परो धर्मो यतो भक्तिरधोक्षजे ।

धर्मः स्वनुष्ठितः पुंसां विष्वक्सेन कथासु यः

भागवत-पत्रिका

नोत्पादयेद् यदि रतिं श्रम एव हि केवलम् ॥

अहैतुक्यप्रतिहता ययात्मा सुप्रसीदति ॥

सर्वोत्कृष्ट धर्म है वह जो आत्मा को आनन्द प्रदायक ।
भक्ति अधोक्षज की अहैतुकी विघ्नशून्य अति मंगलदायक ॥

सब धर्मों का श्रेष्ठ रीति से पालन करते जीव निरन्तर ।
किन्तु हरि-कथा-प्रीति न हो, श्रम व्यर्थ सभी, केवल बंधनकर ॥

वर्ष ५ | गौराब्द ४७३, मास—गोविन्द १, वार—क्षीरोदशायी
शनिवार, ३० माघ, सम्वत् २०१६, १३ फरवरी १९६० | संख्या ९

ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री

श्रीभक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी-प्रभुपादकी

वन्दना

नम ॐ विष्णुपादाय कृष्णप्रेष्ठाय भूतले ।
श्रीमते भक्तिसिद्धान्त सरस्वतीतिनामिने ॥

श्रीवार्षभानवीदेवीदयिताय कृपाब्धये ।
कृष्णसम्बन्धविज्ञानदायिने प्रभवे नमः ॥

माधुर्योज्ज्वलप्रेमाढ्य-श्रीरूपानुगभक्तिद ।
श्रीगौरकरुणाशक्ति विग्रहाय नमोऽस्तु ते ॥

नमस्ते गौरवाणी-श्रीमूर्त्तये दीनतारिणे ।
रूपानुगविरुद्धापसिद्धान्तध्वान्त हारिणे ॥

श्रीश्रीप्रभुपादपद्म-स्तवकः

(त्रिदण्डि स्वामी-श्रीमद्भक्तिरक्षक-श्रीधर महाराज-कृतः)

सुजनार्बुदराधितपादयुगं युगधर्म्मधुरन्धर पात्रवरम् ।
वरदाभयदायक-पूज्यपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम् ॥१॥

भजनोर्जितसज्जनसंघपतिं पतिताधिककारुणिकैकगतिम् ।
गतिवञ्चितवञ्चकाचिन्त्यपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम् ॥२॥

अतिकोमलकाञ्चनदीर्घतनुं तनुनिन्दितहेममृणालमदम् ।
मदनार्बुदवन्दितचन्द्रपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम् ॥३॥

निजसेवकतारकरञ्जिविधुं विपुताहित-हुंकृतसिंहवरम् ।
वरणागतवाञ्छित-शम्दपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम् ॥४॥

विपुलीकृतवैभवगौरभुवं भुवनेषु विकीर्त्तित-गौरदयम् ।
दयनीयगणार्पित-गौरपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम् ॥५॥

चिरगौरजनाश्रयविश्वगुरुं गुरुगौरकिशोरकदास्यपरम् ।
परमादृत भक्तिविनोदपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम् ॥६॥

रघुरूपसनातनकीर्त्तिधरं धरणीतलकीर्त्तितजीवकविम् ।
कविराज नरोत्तमसख्यपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम् ॥७॥

कृपया हरिकीर्त्तनमूर्त्तिधरं धरणीभरहारक-गौरजनम् ।
जनकाधिकवत्सलस्निग्धपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम् ॥८॥

शरणागतकिङ्करकल्पतरुं तरुधिक्कृतभीरवदान्यवरम् ।
वरदेन्द्रगणार्च्चितदिव्यपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम् ॥९॥

परहंसवरं परमार्थपतिं पतितोद्धरणे कृतवेशयतिम् ।
यतिराजगणैः परिसेव्यपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम् ॥१०॥

वृषभानुसुतादयितानुचरं चरणाश्रित-रेणुधरस्तमहम् ।
महदद्भुतपावनशक्तिपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम् ॥११॥

अनुवाद—

मैं, कोटि-कोटि सज्जनोंके द्वारा आराधित, कृष्ण-संकीर्त्तनरूप युग-धर्मके संस्थापक, विश्ववैष्णव राजसभाके पात्रराज अर्थात् अधिकारीवर्गोंमें श्रेष्ठतम्, निखिल जीवोंके भयदूर करनेवालोंकी भी मनोकामना पूर्ण करनेवाले, सर्वपूज्य श्रीचरण-कमलोंमें प्रणाम करता हूँ—अपने प्रभुके पद-नखके ज्योतिःपुञ्जको सदा-सर्वदा प्रणाम करता हूँ ॥१॥

जो भजन-सम्पन्न सज्जन-वृन्दोंके अधिपति हैं, जो पतितजनोंके प्रति अति करुणामय तथा उनकी एकमात्र गति हैं एवं जो छलियोंके भी छली हैं, उन

अचिन्त्य चरणकमलोंको मैं प्रणाम करता हूँ—अपने प्रभुके पद-नखके ज्योतिःपुञ्जको मैं सदा-सर्वदा प्रणाम करता हूँ ॥२॥

अति सुकोमल काञ्चनवर्णवाले सुदीर्घ तनुको मैं प्रणाम करता हूँ—जिस तनुके द्वारा स्वर्णमय कमल-नालोंकी मत्तत्ता (सौन्दर्य) भी निन्दित होती है। जिन नख-चन्द्रोंकी वन्दना कोटि-कोटि कामदेव करते हैं एवं जो श्रीगुरुदेवके चरण-कमलोंकी शोभा विस्तार करते हैं, अपने प्रभुके उन्हीं पद-नखके ज्योतिः पुञ्जको मैं सदा-सर्वदा प्रणाम करता हूँ ॥३॥

जो नक्षत्र-मण्डलको रंजित करनेवाले चन्द्रकी तरह सेवक-मण्डली द्वारा परिवेष्टित होकर उनके चित्तको प्रफुल्लित रखते हैं, भक्तिद्वेषिजन जिनके सिंह गर्जनसे भयभीत रहते हैं एवं निरीह व्यक्ति जिनके चरण-कमलोंका आश्रय ग्रहणकर परम कल्याण लाभ करते हैं, उनको प्रणाम करता हूँ, अपने प्रभुके पदनखके ज्योतिःपुञ्जको मैं सदा-सर्वदा प्रणाम करता हूँ ॥४॥

जिन्होंने श्रीगौरधामका (श्रीनवद्वीपधामका) विपुल ऐश्वर्य प्रकट किया है, जिन्होंने श्रीगौराङ्ग देवकी महाउदारताकी कथाओंका सम्पूर्ण विश्वमें प्रचार किया है एवं जिन्होंने अपने कृपापात्रोंके हृदय में श्रीगौरपादपद्मकी स्थापना की है, उनको प्रणाम करता हूँ; अपने प्रभुके पद-नखके ज्योतिःपुञ्जको मैं सदा-सर्वदा प्रणाम करता हूँ ॥५॥

जो चैतन्यमहाप्रभुके आश्रितजनोंके नित्य आश्रय-स्थल और जगत्गुरु हैं, जो अपने श्रीगुरु-गौरकिशोर-के सेवापरायण हैं एवं जो श्रीभक्तिविनोद ठाकुरके सम्बन्धमात्रसे ही परम आदरयुक्त हैं, उनको प्रणाम करता हूँ, अपने प्रभुके पद-नखके ज्योतिःपुञ्जको मैं सदा-सर्वदा प्रणाम करता हूँ ॥६॥

जिन्होंने श्रीरूप, सनातन और रघुनाथके कीर्त्ति-रूपी झण्डेको सर्वत्र फहराया है, अनेक लोग इस धरणीतलपर जिनको पाण्डित्य-प्रतिभामय श्रीजीव-गोस्वामीसे अभिन्नतनु कहकर प्रशंसा किया करते हैं एवं जिनका श्रीकृष्णदास कविराज तथा ठाकुर नरोत्तमसे सख्यभाव है, उनको प्रणाम करता हूँ; अपने प्रभुके पद-नखके ज्योतिःपुञ्जको मैं सदा-सर्वदा प्रणाम करता हूँ ॥७॥

जीवोंके प्रति असीम कृपा कर जो मूर्त्तिमान हरि-कीर्त्तनरूपमें प्रकाशित हैं; जो धरणीके पापभारको दूर करनेवाले गौर-पार्षद हैं एवं जो जीवोंके प्रति पिता से भी अधिक वात्सल्यके सुकोमल आकर स्वरूप हैं, उनको प्रणाम करता हूँ; अपने प्रभुके पद-नखके ज्योतिः पुञ्जको सदा-सर्वदा प्रणाम करता हूँ ॥८॥

शरणागत किङ्करोंके लिये (अभीष्ट प्रदान करनेमें) जो कल्पतरुके समान हैं, जिनकी सहिष्णुता और उदारता वृक्षोंको भी लज्जित करती हैं एवं वरदाताओं में श्रेष्ठ व्यक्ति भी जिनके दिव्य श्रीचरणकमलोंकी पूजा किया करते हैं, उनको प्रणाम करता हूँ; अपने प्रभुके पद-नखके ज्योतिःपुञ्जको मैं सदा-सर्वदा प्रणाम करता हूँ ॥९॥

जो परमहंसकुलके चूड़ामणि हैं, जो परम पुरुषार्थ श्रीकृष्णप्रेमरूप सम्पत्तिके मालिक हैं, पतित जीवोंके उद्धारके लिये जिन्होंने संन्यासीका वेश धारण किया है एवं श्रेष्ठ त्रिदण्डी संन्यासियोंका समूह जिनके पाद-पद्मोंकी सेवा करता है, उनको प्रणाम करता हूँ; अपने प्रभुके पद-नखके ज्योतिःपुञ्जको सदा-सर्वदा प्रणाम करता हूँ ॥१०॥

जो वृषभानुनन्दिनीके परमप्रिय अनुचर हैं, जिनकी चरण-रजको मैं अपने मस्तकपर धारण करने के सौभाग्यके लिये अभिमान करता हूँ, उस अद्भुत पावनीशक्ति सम्पन्न श्रीगुरुके चरणकमलोंमें मैं प्रणाम करता हूँ—अपने प्रभुके पद-नखके ज्योतिः पुञ्जको मैं सदा-सर्वदा प्रणाम करता हूँ ॥११॥

———

श्रीप्रभुपादकी वाणी

[गौड़ीय आचार्यभास्कर ॐ विष्णुपाद १०८ श्रीश्रीमद्भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपादने अपनी अप्रकट लीलाके कुछ दिन पहले अपनी शिष्य मण्डलीको निम्नलिखित उपदेश दिया था]

"मैंने बहुतोंको उद्वेग दिया है, क्योंकि अकैतव, निरपेक्ष एवं छल-प्रपंचरहित सत्यकथा कहनेके लिये मैं बाध्य था। मैंने निष्कपट होकर हरि-भजन करनेके लिये कहा है। इसलिये हो सकता है कि कुछ लोग मुझे अपना शत्रु समझ रहे हों। अन्याभिलाष और कपटता छोड़कर निष्कपट रूपमें कृष्ण सेवाके प्रति उन्मुख होनेके लिये ही मैंने लोगोंको तरह-तरहसे उद्वेग प्रदान किया है– यह बात वे लोग किसी न किसी दिन अवश्य ही समझेंगे।

आप लोग मिल-जुलकर श्रीरूप-रघुनाथकी कथाओं का परम उत्साहके साथ प्रचार कीजिये। श्रीरूपानुग वैष्णवोंके चरणकमलोंकी धूलि होना ही—हमारी चरम आकांक्षा है। आप लोग एक मात्र भगवानकी अप्राकृत इन्द्रियोंकी परितृप्तिके लिए आश्रय विग्रह (श्रीगुरुदेव) के आनुगत्यमें मिल-जुल कर रहेंगे। आप सभी हरि भजनके उद्देश्यसे दो दिनकी दुनियाँमें किसी प्रकार जीवन-निर्वाह कर चलेंगे। लाखों विपद्, लाखों अपमान एवं लाखों विघ्न क्यों न उपस्थित हों– आप कभी भी हरि–भजन न छोड़िये और न छोड़िये। संसारके अधिकांश व्यक्ति शुद्ध कृष्ण-सेवाकी कथा नहीं सुनते, नहीं ग्रहण करते—ऐसा देख कर निरुत्साहित न होईये। अपना भजन, अपना सर्वस्व—कृष्णकी लीला कथाओंका श्रवण-कीर्तन कदापि न छोड़िये। तृणसे भी अधिक दीन-हीन और वृक्षसे भी अधिक सहिष्णु होकर निरन्तर हरि कीर्तन करेंगे।

हम अपने कुत्ते और शृगालके भोज्य इस शरीरको श्रीचैतन्य महाप्रभुके संकीर्तन यज्ञमें आहुति देनेकी अभिलाषा रखते हैं। हम कोई कर्मवीर अथवा धर्मवीर बननेकी अभिलाषा नहीं रखते। हम तो जन्म-जन्ममें श्रीरूप प्रभुकी चरणकमलोंकी धूलि होना ही चाहते हैं—यही हमारी चरम और एक मात्र अभिलाषा है। भक्ति विनोद-धारा कभी भी बन्द नहीं होगी। आप लोग और भी अधिक उत्साहसे भक्ति-विनोद-मनोऽभीष्ट-प्रचारका व्रत ग्रहण करें। आप लोगोंमें बहुतसे योग्य और कृति व्यक्ति हैं। हमारी कोई भी दूसरी अभिलाषा नहीं; हमारी एक मात्र अभिलाषा है—

आददानस्तृणं दन्तैरिदं याचे पुनः पुनः।
श्रीमद्रूपपदाम्भोज धूलिः स्यां जन्मजन्मनि॥

× × × ×

संसारमें तरह-तरहकी विघ्न-बाधाएँ और नाना प्रकारकी असुविधाएँ हैं; परन्तु उन असुविधाओंको देख कर घबड़ानेकी आवश्यकता नहीं है अथवा उन असुविधाओंको दूर करनेकी चेष्टा करना ही हमारा एक मात्र प्रयोजन नहीं है। बल्कि इन असुविधाओंके दूर होने पर हम कौन सी वस्तु पायेंगे ? हमारा नित्य जीवन कैसा रहेगा ? इन बातोंका परिचय इस जगत में रहते समय ही प्राप्त कर लेना आवश्यक है। यहाँ पर आकर्षण और विकर्षणकी जितनी प्रकारकी वस्तुएँ हैं, जिन्हें हम चाहते हैं और नहीं चाहते हैं

उन दोनोंकी एक मीमांसा होनी आवश्यक है। कृष्ण के चरणकमलोंसे हम जितना ही अधिक अलग होते जायेंगे, जगत्के आकर्षण और विकर्षण-समूह हमें उतना ही अधिक आकृष्ट करेंगे। सांसारिक आकर्षणों से अतीत होकर अप्राकृत हरिनामके प्रति आकृष्ट होने पर ही हम कृष्ण-सेवा-रसकी कथा समझ सकते हैं। कृष्णकी कथाएँ पहले पहल बहुत ही आश्चर्य-जनक और भ्रमोत्पादक सी होती हैं। परन्तु बात ऐसी नहीं है। द्वन्द्वातीत होने पर इन कथाओंमें प्रवेश होता है। कृष्ण-सेवा ही हमारा स्वाभाविक धर्म है, आत्मा का धर्म है।

इस जगतमें किसीके प्रति भी हमारा राग-द्वेष नहीं है। यहाँके सारे व्यापार क्षण-भंगुर हैं। अतएव यहाँकी वस्तुओंसे अपनी आसक्ति दूर कर भगवत-सेवाके प्रति आसक्त होना ही सबका अप-रिहार्य नित्य प्रयोजन है। आप लोग इसी एक उद्देश्य के लिये एकत्र होकर, मिल-जुल कर आश्रय-विग्रहका सेवाधिकार प्राप्त करें। संसारमें श्रीरूपानुग-विचार धारा प्रबल वेगसे प्रवाहित हो। बहुमुखी श्रीकृष्ण-संकीर्तन-यज्ञके प्रति किसी भी अवस्थामें हमें तनिक भी विरक्ति न हो। उसके प्रति क्रमशः बढ़ता हुआ अनुराग रहने पर ही सर्वार्थकी सिद्धि होगी। आप लोग श्रीरूपानुगजनोंके एकान्त आनुगत्यमें श्रीरूप-रघुनाथकी वाणीका परमोत्साहसे और निर्भीक कंठसे प्रचार कीजिये।

—(श्रीगौड़ीय पत्रिकासे अनुदित)

श्रीलप्रभुपादकी उपदेशावली

१—विषय विग्रह श्रीकृष्ण ही एक मात्र भोक्ता हैं, तदतिरिक्त सभी उनके भोग्य हैं।

२—जो हरि भजन नहीं करते वे सभी निर्बोध और आत्मघाती हैं।

३—श्री हरिनाम-ग्रहण और भगवत् साक्षात्कार दोनों एक ही बात हैं।

४—जो पंच-मिश्रित धर्मोंका पालन करते हैं, वे भगवान्की सेवा नहीं कर सकते।

५—मुद्रण-यन्त्रके स्थापन, भक्ति ग्रन्थोंके प्रचार और नाम-हाटके प्रचारद्वारा ही श्रीमायापुरकी (श्रीचैतन्य महाप्रभुके जन्म स्थानकी) प्रकृत सेवा होगी।

६—हम सत्कर्मी, कुकर्मी अथवा ज्ञानी-अज्ञानी नहीं हैं; हम तो अकैतव हरिजनोंके पाद-त्राण-वाहक, "कीर्त्तनीयः सदा हरिः" मन्त्रमें दीक्षित हैं।

७—केवल आचार-रहित प्रचार कर्म-अंगके अन्तर्गत है। पर-स्वभवाकी निंदा न कर आत्म-संशोधन करना चाहिये; यही मेरा उपदेश है।

८—माथुर-विरह-कातर व्रजवासियोंकी सेवा करना ही हमारा परम धर्म है।

९—यदि हम श्रेय-पथ चाहते हैं, तो असंख्य जन-मतका परित्याग करके भी श्रौतवाणीका ही श्रवण करना चाहिये।

१०—पशु, पक्षी, कीट, पतंग प्रभृति लक्ष-लक्ष योनियोंमें रहना अच्छा है, तथापि कपटताका आश्रय करना उचित नहीं, निष्कपट व्यक्तिका मङ्गल होता है।

११—सरलताका नामान्तर ही वैष्णवता है। परमहंस वैष्णवोंके दास सरल होते हैं; इसलिये वे ही सर्वोत्कृष्ट ब्राह्मण हैं।

१२—जीवोंकी विपरीत रुचिको परिवर्त्तन करना ही सर्वश्रेष्ठ दयालुताका परिचय है। महामाया के दुर्गसे यदि एक जीवकी भी रक्षा कर सको, तो अनन्त कोटि अस्पतालोंके निर्माणकी अपेक्षा उसमें अनंतगुन परोपकारका कार्य होगा।

१३—हम इस जगतमें काठ-पत्थरके कारीगर होने नहीं आये हैं; हम तो श्रीचैतन्यदेवकी वाणीके वाहक मात्र हैं।

१४—हम इस जगतमें अधिक दिन न रहेंगे, हरि-कीर्त्तन करते-करते हमारा देहपात होनेसेही इस देह-धारणकी सार्थकता है।

१५—श्रीचैतन्य देवके मनोभीष्ट-संस्थापक श्रीरूप गोस्वामीके पाद-पद्मकी धूलि ही हमारे जीवनकी एक मात्र आकांक्षाकी वस्तु है।

१६—हमारा "निरपेक्ष सत्य" भाषण अन्य मनुष्योंको अप्रीतिकर होगा, इस भयसे यदि सत्य कथनका परित्याग करूँ तो मेरा श्रौत-पथका परित्याग कर अश्रौत पथका ग्रहण करना हो गया, मैं अवैदिक-नास्तिक हो गया—सत्यस्वरूप भगवान् में मेरा विश्वास नहीं रहा।

१७—श्रीमन्महाप्रभुद्वारा लिखे गये शिक्षाष्टकका 'परं विजयते श्रीकृष्णसंकीर्त्तन' ही गौड़ीय मठके एक मात्र उपास्य हैं।

१८—मठवासियोंमें सहिष्णुता गुण होना आवश्यक है।

१९—सब लोग मिल-जुल कर एक तात्पर्यपर होकर हरि-सेवा करें।

२०—जहाँ हरि कथा होती है, वहीं तीर्थ है।

२१—महाभागवत सबको अपना गुरु समझते हैं, इसीलिये महाभागत ही एक मात्र जगद् गुरु है।

२२—वैष्णव-गुरुकी आज्ञाका पालन करनेके लिये चाहे मुझे दांभिक बनना पड़े, चाहे पशु बनना पड़े, अथवा अनन्तकालके लिये घोर नरकमें ही क्यों न वास करना पड़े—मुझे अनन्तकालके लिये नरकमें वास करना पसंद है। मैं श्रीगुरुदेवके चरणोंके प्रतापसे जगतके अन्य समस्त-प्रकारके चिन्ता-श्रोतोंको मुष्टि-प्रहारसे चूर्ण-विचूर्ण कर दूँगा—मैं इतना दांभिक हूँ।

२३—निर्गुण वस्तुके साक्षात्कारके लिये कोई दूसरा पथ नहीं है—एक मात्र कानको छोड़ कर।

२४—हम जीव द्रष्टा नहीं—दृश्य हैं, भोक्ता नहीं भोग्य हैं। भगवान ही द्रष्टा हैं, वही एक मात्र सबके भोक्ता हैं।

श्रीगुरु-परम्परा

[ॐ विष्णुपाद श्रीमद्भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी]

कृष्ण हइते चतुर्मुख, हय कृष्णैकोन्मुख,
ब्रह्मा हइते नारदेर मति ।
नारद हइते व्यास, मध्व कहे व्यासदास,
पूर्णप्रज्ञ पद्मनाभ-गति ॥
नृहरि माधववंशे, अक्षोभ्य परमहंसे,
शिष्य बलि अङ्गीकार करे ।
अक्षोभ्येर शिष्य 'जय-तीर्थ' नामे परिचय,
ताँर दास्ये ज्ञानसिन्धु तरे ॥
ताँहा हैते दयानिधि, ताँर दास विद्यानिधि,
राजेन्द्र हइल ताँहा हइते ।
ताँहार किंकर 'जय-धर्म' नामे परिचय,
परम्परा जान भालमते ॥
जयधर्म-दास्ये ख्याति, श्रीपुरुषोत्तम-यति,
ताँ ह'ते ब्रह्मण्यतीर्थ-सूरी ।
व्यासतीर्थ ताँर दास, लक्ष्मीपति व्यासदास,
ताँहा हइते माधवेन्द्रपुरी ॥
माधवेन्द्रपुरीवर-शिष्यवर श्रीईश्वर,
नित्यानन्द, श्रीअद्वैत विभु ।
ईश्वरपुरीके धन्य, करिलेन श्रीचैतन्य,
जगद्गुरु गौर-महाप्रभु ॥
महाप्रभु श्रीचैतन्य, राधाकृष्ण नहे अन्य,
रूपानुग-जनेर जीवन ।
विश्वंभर-प्रियंकर, श्रीस्वरूपदामोदर,
श्रीगोस्वामी रूप, सनातन ॥
रूपप्रिय महाजन, जीव, रघुनाथ हन,
ताँर प्रिय कवि कृष्णदास ।
कृष्णदास प्रियवर, नरोत्तम सेवापर,
ताँर पद विश्वनाथ-आश ॥
विश्वनाथ भक्त साथ, बलदेव, जगन्नाथ,
ताँर प्रिय श्रीभक्तिविनोद ।
महाभागवतवर, श्रीगौरकिशोरवर,
हरि-भजनेते जाँर मोद ॥

'श्रीवार्षभानवी' वरा, सदा सेव्य-सेवापरा,
ताँहार दयितदास नाम ।
एइ सब हरिजन, श्रीकेशवेर पूज्य हन,
ताँदेर उच्छिष्टे मोर ।।*

संत [सज्जन] के लक्षण

करुणा—२२

दूसरोंके दुःखको दूर करनेकी इच्छाको करुणा कहते हैं। करुणायुक्त मनुष्य करुण हैं। वैष्णवोंके छब्बीस गुणोंमेंसे करुणा एक है। वैष्णव-सज्जनोंके अतिरिक्त अन्यत्र कहीं दृष्टिगोचर होने पर भी वहाँ करुणाका पूर्ण और नित्य प्रकाश असंभव है। वैष्णव संतोंमें यह गुण नित्य और पूर्णरूपमें अवस्थित होता है।

सज्जन (संत) सदा नित्यानन्दमें स्थित हैं, अतएव उनके दुःखकी संभावना नहीं। भगवत्-विमुख असज्जन व्यक्ति ही दुःखी होते हैं। अतएव सज्जन पुरुषका हृदय असज्जनोंका दुःख देखकर करुणासे भर जाता है। असज्जन व्यक्ति अपने दुखके विनाशके लिये स्वर्ग और मर्त्यलोकमें सब जगह भटकते फिरते हैं; परन्तु कहीं भी चैन नहीं पाते हैं। वैष्णवजन ही उनका दुःख दूर करनेमें एक मात्र समर्थ हैं।

असज्जन कहनेसे मनोधर्मी निर्भेद ब्रह्मानुसंधान-में निरत मायावादी और विषय-सुखमें आसक्त जड़चिन्तामें प्रमत्त कर्मीका बोध होता है। ये दोनों अनित्य अनुष्ठानोंमें ही व्यस्त रहते हैं। अतएव वे नित्य या सत्य शब्दवाच्य नहीं हैं। कर्म या ज्ञानका पर्दा हट जानेसे ही विष्णुभक्ति हो जायगी—ऐसी बात नहीं है। अन्याभिलाषी या ढोंगी भक्त अपने-को विष्णुभक्त कहवानेके लिये बड़े उत्कंठित रहते हैं, परन्तु वे यह नहीं जानते कि वैष्णव पदवी बड़ी दुर्लभ है। हमारे दुखोंका मूल कारण है—विष्णु-भक्तिसे विमुख होना। इसी मूल कारणसे जीव मायाके बन्धनमें पड़ कर दुःख समुद्रमें डूब जाता है। इस दुःखसे उद्धार पानेके लिये वह कभी अनित्य सकाम कर्मोंका, कभी अभेद ज्ञानका और कभी स्वेच्छाचारका आश्रय लेता है। परन्तु इनसे उसे नित्य सुखकी प्राप्ति नहीं होती। सौभाग्यवश जब वे चारों तरफसे असहाय होकर वैष्णवसज्जनोंके चरणोंमें शरणागत होते हैं, तब वैष्णवजन उन पर करुणा करते हैं—उन्हें भगवानके नाम, रूप, गुण और लीला-कथाओंका श्रवण कराकर माया बन्धनसे छुड़ा देते हैं और नित्य भगवत्सेवा रूप परमानन्दमें प्रतिष्ठित कर देते हैं। संसारमें इस करुणाकी कोई तुलना नहीं है।

अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष—इस चतुर्वर्गकी कामना ही दुःखका कारण है। जब तक देहात्म-बुद्धि दूर नहीं होती, जब तक सूक्ष्म शरीरका अहं-कार नष्ट नहीं हो जाता, तब तक चतुर्वर्ग ही हमारा साध्य होता है। परन्तु सज्जनोंकी कृपासे जब हम इनकी निस्सारता उपलब्धि करते हैं, तब हम उन्हीं की कृपासे इनसे विरक्त होकर विष्णु-सेवामें नियुक्त होते हैं। संसार दुःखसे उद्धार पानेका यही एक मार्ग है। वैष्णव सर्वदा दुःखी जीवोंको संसार-दुःखसे उबार कर भगवत्-सेवामें नियुक्त करनेके लिये व्यस्त होते हैं। यही उनकी करुणाका परिचय है। हरि-सेवामें नियुक्त करना ही करुणाका पूर्ण-विकाश है।

—ॐ विष्णुपाद श्रीमद्भक्ति सिद्धान्त सरस्वती।

---

*अन्तिम त्रिपदी विशुद्ध सारस्वत गौड़ीयजनों द्वारा संयोजित है।

जगद्गुरु श्रीभक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी और उनका विचार-वैशिष्ट्य

धर्मकी गति एक ही समान अविच्छिन्न गतिसे सदा प्रवाहित नहीं होती। उसके प्रवाहको रोकनेवाले अनेक प्रतिबन्ध समय-समय पर उत्पन्न हुआ करते हैं। इन सामयिक प्रतिबन्धोंको हटा कर धर्मके रुद्धप्राय प्रवाहको गतिशील बना देनेके लिये समय-समय पर करुणावरुणालय भगवान् स्वयं आविर्भूत होते हैं अथवा अपने प्रिय पार्षदोंको भूतलपर आविर्भूत कराते हैं। भगवान् और भगवान्के प्रिय पार्षदोंके भुवनमङ्गल आविर्भावके विषयमें यह साधारण नियम रहने पर भी समस्त अवतारोंके मूलाधार अवतारी पुरुष स्वयं-भगवान् श्रीकृष्ण और उनके प्रिय पार्षदोंके आविर्भावमें एक विशेष रहस्य होता है, जिसमें अवरुद्ध-प्राय धर्मको गति-प्रदान-कार्य भी गौणरूप में अनुस्युत रहता है।

पूर्व-अवस्था

श्रीचैतन्यमहाप्रभुने आर्भूत होकर जिस अनर्पितचर कृष्ण-प्रेमकी धारा—शुद्धभक्तिकी धारा प्रव हित की थी, उनकी अप्रकट लीलाके पश्चात उस शुद्धभक्ति धाराको छः गोस्वामियोंने, श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम ठाकुरने, श्रीविश्वनाथ चक्रवर्त्ती एवं श्रीबलदेव विद्याभूषणने क्रमशः संरक्षण देकर श्रीचैतन्य मनोभीष्टको पूर्ण किया। परन्तु बलदेव विद्याभूषणके अप्रकटके पश्चात् शुद्धभक्तिने अन्धकार युगमें कुछ कालके लिये प्रवेश किया है। इस समय लोग श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके प्रचारित भक्ति-धर्मके सम्बन्धमें भूल धारणाको स्थान देने लगे। जो श्रीचैतन्य महाप्रभुका बिलकुल आचरित और प्रचारित विषय नहीं है, उसीको शत-प्रतिशत लोग श्रीचैतन्यदेवका धर्मोपदेश मानने लगे थे। आधुनिक अपसम्प्रदायोंने शास्त्र-विरुद्ध सिद्धान्तोंका प्रचुर प्रचार कर जनताके हृदयमें शुद्धभक्तिके प्रति अश्रद्धाका भाव पैदा कर दिया था। इनमेंसे कुछ चरित्रहीन, अर्थ-लोलुप सिद्धान्त-विरोधी आधुनिक सम्प्रदाय अपनेको श्रीचैतन्य-सम्प्रदाय बतला कर कहीं चैतन्यविरोधी मत और कहीं श्रीचैतन्यमतको विकृत कर उस विकृत मतका प्रचार करते थे। इन तथाकथित विकृत-चैतन्य मतावलम्बी व्यक्तियोंका आचरण देख कर शिक्षित लोग वैष्णव सम्प्रदाय मात्रसे घृणा करने लगे थे।

समाजमें वीर-पूजा, नायक-पूजा आदिकी प्रधानता हो गयी थी। अतिमानववाद, दरिद्र-नारायण, जनता-जनार्दन आदि बहुमुखी मायावाद रूपी नास्तिकता शिक्षित समाजकी बुद्धिका भी ग्रास कर रही थी। इसके अतिरिक्त राजनैतिक साम्यवाद-की जो विश्वग्रासी अग्नि समग्र जगत्में प्रज्वलित हुई, वह अवशिष्ट भारतीय-धर्मके कङ्कालको भी झुलसा देने लगी। उससे एक श्रेणीके लोगोंने-धर्मको मौखिक रूपमें स्वीकार किया और दूसरी श्रेणीके लोगोंने धर्मको सम्पूर्ण रूपसे अनावश्यक समझ कर उस मौखिकताका भी त्याग कर दिया। धर्मके ऐसे दुर्दिनमें भारतीय-धर्मके क्षितिजमें क्रमशः दो भगवत् विभूतियोंका आविर्भाव हुआ, जिसके दिव्य आलोक-से धर्मके अन्धकार युगकी परिसमाप्ति हुई। ये दिव्य विभूतियाँ हैं—भगवत् पार्षद श्रीभक्तिविनोद ठाकुर और गौरवाणीके मूर्तिमान विग्रह श्रीभक्ति सिद्धान्त सरस्वती। ठाकुर भक्तिविनोद आधुनिक जगतमें शुद्धभक्ति-प्रचारके बीज दाता हैं और श्रीभक्ति-सिद्धान्त सरस्वती उसे पुष्पित और पल्लवित कर फल-प्रद बनानेवाले हैं; ठाकुर भक्तिविनोदने शुद्ध-भक्ति-प्रचारकी परिकल्पना और योजना प्रस्तुत की

और श्रीभक्तिसिद्धान्त सरस्वतीने उन परिकल्पनाओं एवं योजनाओंको व्यावहारिक रूप देकर कार्यमें परिणत किया; ठाकुर भक्तिविनोदने उसका ढाँचा प्रस्तुत किया, श्रीभक्तिसिद्धान्त सरस्वतीने उसमें प्रान डाल कर, उसे सँवार-सजा कर जनताके सामने ऐसे आकर्षक और युगोचित ढङ्गसे उपस्थित किया कि जनताने उत्कंठित होकर उसे बड़ी श्रद्धासे अपनाया।

जन्म और मात-पिता

ॐ विष्णुपाद श्रीभक्तिसिद्धान्त सरस्वतीका आविर्भाव ६ फरवरी सन् १८७८ ई० शुक्रवारको माघी कृष्ण-पंचमी-तिथिमें अपराह्न ३॥ बजे श्रीजगन्नाथपुरीमें हुआ था। पिताका नाम श्रीभक्ति विनोद ठाकुर और माताका नाम श्रीमती भगवती देवी था। ये भक्ति विनोद ठाकुर ही आधुनिक युगमें शुद्ध भक्ति-प्रचारके मूल पुरुष हैं। विशाल गौड़ीय-साहित्यका सृजन कर श्रीमन्महाप्रभुके प्रचारित शुद्धाभक्तिको पुनः प्रवाहित करनेके कारण श्रीभक्ति विनोद ठाकुर श्रीमाध्व गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदायमें सप्तम गोस्वामीके नामसे ख्यात हैं। माता भगवती देवीने नवजात शिशुके कंधे पर स्वाभाविक यज्ञोपवीत और द्वादश अंगोंमें तिलक देखकर बड़ी विस्मित हुईं। उन्होंने तत्काल ही अपने पतिदेव और घरके दूसरे लोगोंको बुलाकर उस अलौकिक बालकको दिखाया। सबने उस शिशुको कोई महापुरुष होने का अनुमान किया। ठाकुर भक्तिविनोदने श्रीजगन्नाथ देवकी पराशक्ति विमलादेवीके नाम पर शिशुका नाम 'श्रीविमलाप्रसाद' रखा।

शैशव

विमला प्रसाद एक प्रतिभासम्पन्न शिशु थे। शैशवकालसे ही उनकी विलक्षण प्रतिभाका परिचय लोगोंको होने लगा। एक समय श्रीजगन्नाथदेवकी रथयात्राका महोत्सव हो रहा था। विमलाप्रसाद उस समय केवल छः महीनेके शिशु थे। श्रीजगन्नाथ देवका रथ मूल मंदिरसे गुण्डिचा-मंदिर जानेके समय रास्तेमें इनके घरके सामने राजमार्ग पर खड़ा हो गया। बड़े-बड़े प्रयत्न किये जाने पर भी रथ टस से मस नहीं हुआ; लगातार तीन दिनों तक वहीं खड़ा रहा। ऐसी दशामें श्रीभक्तिविनोदठाकुरके घरके सामने ही तीन दिनों तक लगातार हरि-संकीर्तन होता रहा। तीसरे दिन श्रीमती भगवती देवीकी गोदमें सोये हुए शिशुने हाथ पसार कर श्रीजगन्नाथ देवके चरण-कमलोंका स्पर्श किया; पुजारीने शिशुके गलेमें भगवानकी प्रसादी पुष्पमाला दी। भक्ति विनोद ठाकुरने उसी समय बच्चेके मुखमें भगवान का महाप्रसाद देकर अन्न-प्राशन भी कर दिया। इतना होना था कि एक बड़े शब्दके साथ भगवानका रथ धीरे-धीरे आगे की ओर बढ़ने लगा। समस्त यात्री शिशुके प्रभावको देख कर दंग रह गये।

शिशुका सारा शैशवकाल हरि-संकीर्त्तनमय वातावरणमें ही व्यतीत हुआ। इसका कारण यह था कि श्रीभक्तिविनोद ठाकुर जहाँ भी रहते, वह स्थान सर्वदा हरि-संकीर्त्तनसे, भगवान और भक्तोंकी वीर्यवती कथाओंसे मुखरित रहा करता। बालककी भगवद्भक्तिके प्रति स्वाभाविक रुचि थी।

शिक्षा

कुछ दिनोंके पश्चात् ठाकुर भक्ति विनोद पुनः बंगालमें चले आये। यहाँ वे रानाघाट और श्रीरामपुर आदि स्थानों पर डेपुटी मजिस्ट्रेटके पद पर थे। बालक विमलाप्रसादको यहीं स्कूलमें भर्ती करा दिया गया। कुछ ही दिनोंमें बालकने अपनी अलौकिक प्रतिभा और सूक्ष्म बुद्धिसे तथा प्रगाढ़ अनुशीलन और विशुद्ध चरित्रसे सबको विस्मित कर दिया। जब वह सातवीं कक्षामें पढ़ते थे, तभी श्रीभक्तिविनोद ठाकुर ने पुरीसे तुलसीकी माला मँगाकर इसे 'श्रीहरिनाम' महामंत्र और 'श्रीनृसिंह' मंत्रराज प्रदान किया। इसी समयसे वे स्वयं बालकको 'श्रीचैतन्यचरितामृत' ग्रन्थ भी नियमित रूपसे पढ़ाने लगे।

जिस समय विमलाप्रसाद ६ वर्षके थे, उस समय कलकत्तामें रामबागान स्थित उनके पैत्रिक वासस्थानमें श्रीभक्ति विनोद ठाकुर गृह-निर्माण करा रहे थे। उसमें खुदाईके समय श्रीकुर्मदेवकी अर्च्चा मूर्त्ति प्रकाशित हुई। भक्ति विनोद ठाकुर ६ वर्षीय विमला-प्रसादको पांचरात्रिक विधिसे अर्चनकी शिक्षा देकर उसे श्रीकुर्मदेवके अर्चन-पूजनका भार दे दिया।

बालकको हाई स्कूलकी शिक्षाके साथ-साथ संस्कृत की भी शिक्षा दी जाने लगी। जब वे पाँचवीं श्रेणीमें थे, तभीसे तारकेश्वर लाईनके सियाखाला नामक ग्रामके प्रख्यात पण्डित महेशचन्द्र चूड़ामणिके पास गणित और ज्योतिषके ग्रन्थोंका अध्ययन करने लगे। थोड़े ही दिनोंमें उक्त विषयोंमें बालकने अपनी अभुतपूर्व प्रतिभा और पारदर्शिताका परिचय दिया। गणित और फलित ज्योतिषमें बालककी स्वाभाविक प्रतिभा देख कर शिक्षक और सम्पर्कमें आनेवाले लोग आश्चर्यचकित हो पड़ते थे। १५ वर्षकी छोटी अवस्थामें ही महाभागवत गुरुवर्गने बालककी विद्वता-से मुग्ध होकर उसे 'सिद्धान्त सरस्वती' की उपाधि प्रदान कर दी थी।

सन् १८८५ ई० में ठाकुर भक्ति विनोदने कलकत्ते में विश्ववैष्णव राजसभाकी पुनः प्रतिष्ठा की। उसके रविवारीय साप्ताहिक अधिवेशनमें देशके उच्च शिक्षित और संभ्रान्त व्यक्ति सम्मिलित होते और धर्मके सम्बन्धमें चर्चा किया करते थे। बालक विमला-प्रसाद प्रत्येक साप्ताहिक अधिवेशनमें श्रीभक्ति विनोद ठाकुरके साथ उनके 'भक्ति रसामृतसिन्धु' ग्रन्थको लेकर जाया करते और वहाँ ध्यान पूर्वक शास्त्रीय आलोचना श्रवण करते थे। ये केवल विद्या-लयमें ही पाठ्य पुस्तकोंका अध्ययन करते, घर पर इनका अधिक समय धर्म-शास्त्रों तथा ज्योतिषके ग्रन्थोंके अध्ययनमें ही बीतता था।

सन् १८९२ ई० में ये संस्कृत कोलेजमें भर्ती हुए। वहाँ इन्होंने पाठ्य-पुस्तकोंको पढ़नेके बदले कॉलेज-लाईब्रेरीके प्रधान-प्रधान समस्त ग्रन्थोंको पढ़ डाला। इसी समय वैदिक पण्डित पृथ्वीधर शर्माके निकट वेदोंका भी विधिवत अध्ययन किया। पण्डित पृथ्वी-धर शर्मासे वेदोंका अध्ययन कर वे सन् १८९८ ई० में पृथक रूपमें 'सारस्वत-चतुष्पाठी' खोल कर विद्यार्थियोंको पढ़ाने लगे। प्रकाण्ड विद्वता और अध्यापन कुशलतासे थोड़े ही दिनोंमें इनका यश चारों ओर फैल गया। इन्होंने इसी चतुष्पाठीसे 'ज्योतिर्विद' और 'बृहस्पति' नामक ज्योतिषकी दो मासिक पत्रिकाएँ और कुछ ज्योतिषके ग्रन्थोंको भी प्रकाशित किये।

जड़ विद्यासे वैराग्य

इस पाठशालामें अध्यापना करते समय ही इनको जड़ विद्या और संसारसे वैराग्य हुआ। ये अपनी आत्मकथामें लिखते हैं—'मैंने सोचा यदि मैं अधिक उच्च शिक्षा प्राप्त करूँगा, तो घरवाले मुझे संसारमें प्रवेश करनेके लिये तङ्ग करेंगे। मैं जड़ विद्याके अनुशीलन और अर्थोपार्जन द्वारा भवजालमें फँस कर अपना अमूल्य जीवन नष्ट नहीं करूँगा। मैं इस जीवनको सम्पूर्ण रूपसे हरि-सेवामें ही लगाऊँगा। ऐसा स्थिर मैंने संस्कृत कॉलेजका परित्याग कर दिया।'

तीर्थ-पर्यटन

सन् १८९५ ई० में स्वाधीन त्रिपुरा स्टेटके महाराजा वीरचन्द्रने इनकी विद्वतासे मुग्ध होकर अपने यहाँ बुला लिया। उस समय वहाँ 'राजरत्नाकर' नामक एक ग्रन्थके प्रकाशनका कार्य चल रहा था, जिसमें त्रिपुरा-राज्यके आदि नरेशसे लेकर तत्कालीन महाराजा वीरचन्द्र तकके समस्त नरेशोंका जीवन-चरित्र लिखा जा रहा था। सिद्धान्त सरस्वती सहकारी सम्पादकके रूपमें 'राजरत्नाकर' का सम्पादन कार्य करने लगे। पीछे राजा बहादुर और राजकुमार को संस्कृत और बंगला पढ़ानेका भार भी प्राप्त हुए। पर यहाँ इन कामोंमें इनका तनिक भी मन नहीं लगता

था। परन्तु इनको यहाँ पर परमार्थ-विषय अनुशीलनके लिये सब समय सुयोग रहता था। इसीलिये इस राज-कार्यको छोड़ा नहीं। यहाँ एक बड़ा ग्रन्थागार था, जिसमें प्रायः समस्त प्राचीन और आधुनिक धर्मग्रन्थ थे। इन्होंने इन समस्त ग्रन्थोंको पढ़ डाला। इतना ही नहीं, यहीं से मथुरा, वृन्दावन, व्रजके समस्त तीर्थ, द्वारका, पुरी, सिंहाचलम, राज महेन्द्री, मद्रास, तिरुपति, कुंभकोनम, कांजिभरम, श्रीरंगम, मदूरा, मुम्बई, कन्याकुमारी आदि भारतके उन समस्त प्रधान-प्रधान तीर्थोंमें भ्रमण किये, जहाँ-जहाँ कलि-युगपावनावतारी श्रीचैतन्य महाप्रभु कृपाकर पधारे थे तथा उन स्थानोंसे आवश्यकीय साम्प्रदायिक तथ्योंका संग्रह किये।

श्रीगुरुदेवसे मिलन और दिक्षा

इसी बीच ठाकुर भक्तिविनोद सरकारी पदसे अवसर ग्रहण कर श्रीधाम नवद्वीपके गोद्रुम द्वीपमें सरस्वती और गङ्गाके सङ्गमके पास ही 'आनन्द-सुखद-कुञ्ज' नामक एक भजन कुटी बनायी। श्री-सिद्धान्त सरस्वती त्रिपुरासे अवकाश मिलते ही आनन्द सुखद कुञ्जमें ठाकुर महाशयके दर्शनोंके लिये आया करते थे। उस समय गौड़ मण्डल तथा व्रज-मण्डलके प्रख्यात विरक्त महात्मा श्रीगौरकिशोरदास बाबाजी भी आनन्द-सुखद-कुञ्जमें उपस्थित होकर ठाकुर भक्ति विनोदसे श्रीमद्भागवत श्रवण करते थे। यहीं पर सिद्धान्त सरस्वती की भेंट बाबाजी महाराजसे सर्व प्रथम सन् १८९८ ई० में हुई। बाबाजी महाराजके अतिमर्त्य चरित्र, आदर्श भक्तिमय जीवन और तीव्र वैराग्य देखकर सिद्धान्त सरस्वती बड़े प्रभावित हुए। इन्होंने बाबाजीसे दीक्षा लेनेका विचार किया। परन्तु बाबाजीने दीनतापूर्वक कहा—'कहाँ आप सर्व शास्त्र पारङ्गत परमसंत श्रीभक्तिविनोद ठाकुरके सुपुत्र हैं, स्वयं भी अगाध विद्वान हैं, बड़े घरमें जन्मे हैं, और कहाँ मैं मूर्ख व्यक्ति हूँ। मैं आपको कैसे दीक्षा दे सकता हूँ?' यह सुन कर सिद्धान्त सरस्वतीको बड़ी निराशा हुई। उन्होंने कठोर वैराग्यका अवलम्बन किया। दिन-रात २४ घंटोंमें एक बार थोड़ा सा भगवत् प्रसाद पाते, वह भी थाल या पत्तोंमें नहीं, जमीन पर रख कर गोमुख द्वारा (बिना हाथका प्रयोग किये गायकी तरह केवल मुख लगा कर) ही प्रसाद सेवन करते। इनका कठोर वैराग्य और अपूर्व निष्ठा देख कर बाबाजी महाराज-का हृदय द्रवित हुआ। उन्होंने ठाकुर भक्ति विनोदकी इच्छानुसार सिद्धान्त सरस्वतीको भागवती दीक्षा प्रदान की। यह दीक्षा सन् १९०० ई० में सम्पन्न हुई थी।

दीक्षाके पश्चात् इन्होंने अपना जीवन सम्पूर्ण रूपसे हरि-सेवामय बनानेका संकल्प कर लिया। सन १९०५ ई० में इनकी इच्छानुसार त्रिपुराधीशने इनको राज-कार्यसे मुक्त कर दिये। महाराजने अवसर-प्रदानके समय इनसे अवशिष्ट जीवन भर तक पूरा वेतन पेन्सनके रूपमें देनेकी अभिलाषा व्यक्त की। सिद्धान्त सरस्वतीने उस समय तो महाराजका अनु-रोध मान लिया; परन्तु कुछ दिनोंके बाद उक्त पेंसनको अस्वीकार कर दिया।

अब इन्होंने श्रीभक्ति विनोद ठाकुरके निर्देशा-नुसार श्रीगौराविर्भाव स्थली श्रीधाम मायापुरमें रह कर भारत और भारतके बाहर श्रीचैतन्य महाप्रभु की वाणी-प्रचारका कार्य आरम्भ किया।

शुद्ध-भक्तिका प्रचार

श्रीभक्ति सिद्धान्त सरस्वतीके जीवनका प्रधान लक्ष्य शुद्ध भक्तिकी पुनः प्रतिष्ठा कर श्रीचैतन्य महा-प्रभुके मनोभीष्टको पूर्ण करना था। इन्होंने अपनी अलौकिक विद्वता, अकाट्य शास्त्र-युक्ति, प्रखर प्रतिभा एवं शास्त्र-प्रमाणोंके बल पर भक्ति-विरुद्ध कर्मी, ज्ञानी मायावादी और अन्यान्य अपसम्प्रदायों-के कुसिद्धान्तोंका खण्डन कर उनकी निस्सारता प्रमाणित करदी तथा श्रीचैतन्य महाप्रभुके प्रेम-धर्मका अत्यन्त अल्पकालमें सर्वत्र प्रचार कर दिया। जड़वादके

विनाशकारी युगमें इनका यह जगत कल्याणकारी कार्य बड़े महत्वका है। इस महत्वपूर्ण कार्यके लिये इन्होंने अनेक मौलिक, व्यापक और नितांत उपादेय साधनोंका अवलम्बन किया। इनका मैं यथास्थान पर उल्लेख करूँगा।

सन् १६०६ ई० में इन्होंने श्रीधाम मायापुरमें चन्द्रशेखर भवनमें 'भजन-भवन' का निर्माण कर प्रचारका कार्य आरम्भ कर दिया। वहाँसे ये गाँव-गाँव और नगर-नगरमें भ्रमण कर शुद्धभक्ति धर्मका प्रचार करने लगे। शास्त्रीय-युक्ति और प्रमाणोंके बल पर अपसम्प्रदायोंके भक्ति-विरुद्ध अपसिद्धान्तोंका निर्भयतापूर्वक खण्डन कर निरपेक्ष सत्यके प्रतिपादनमें अपना पूरा जोर लगा दिया। सखी, भेकी, गौरनागरी, सहजिया, स्मार्त, जाति गोसाईं तथा बहुमुखी मायावाद आदि असत् सम्प्रदायोंके विचारों को शास्त्र-विरुद्ध प्रमाणित कर उन्हें चूर्ण-विचूर्ण कर दिया। इनमेंसे कुछ ध्वंश हो गये, कुछने आत्म-समर्पण कर दिये और कुछ मलिन हृदय रूपी घोर अन्धकार पूर्ण गिरि-कन्दराओंमें जा छिपे।

सन् १६११ ई० में मेदिनीपुरमें 'बालिघाई' नामक स्थान पर जाति-गोस्वामी और स्मार्त ब्राह्मणोंने मिल कर वैष्णवोंको शास्त्रार्थके लिये ललकारा। अशेष शास्त्रदर्शी विश्वम्भरानन्द देव गोस्वामीके सभापतित्व-में विराट सभा हुई। वृन्दावनके प्रसिद्ध निरपेक्ष पण्डित श्रीमधुसूदन गोस्वामी भी उक्त सभामें उपस्थित थे। श्रीभक्तिविनोद ठाकुरकी आज्ञा लेकर श्रीभक्ति सिद्धान्त सरस्वतीठाकुरने उक्त शास्त्रार्थमें वैष्णव-धर्मका प्रतिनिधित्व किया। असंख्य जनता और विराट पण्डित मण्डलीमें विरोधियोंके विचारों की धज्जी उड़ाकर वैष्णव-धर्मकी श्रेष्ठता स्थापन कर दिया। 'वैष्णव धर्मकी जय' के नारोंसे आकाश-गूंज उठा। विरोधीगण मुख छिपाकर भागे। उनकी उन शास्त्रयुक्तियोंका संग्रह 'ब्राह्मण और वैष्णव' के नामसे प्रकाशित हुआ। इस विजयसे बंगालमें लुप्त-प्राय विशुद्ध वैष्णवधर्म पुनः प्रबल रूपसे पनप उठा।

ये निरपेक्ष-सत्यके परम निर्भिक प्रचारक थे। कसिमबाजारकी सम्मेलनी और अपने गुरुदेव नित्य-लीला प्रविष्ट श्रीगौरकिशोरदास बाबाजीकी समाधि-के अवसर पर इन आचार्य केशरीकी निरपेक्षता, निर्भिकता एवं अपूर्व वैष्णव-तेजका जो परिचय पाया जाता है, वह विश्वके इतिहासमें अतुलनीय है। विरोधियोंने इनको जानसे मार डालनेके लिये कई षड्यन्त्र किये, जिससे वैष्णवधर्मकी प्रगति रुक जाय, परन्तु भगवानकी इच्छासे उनके सारे षड्यन्त्र विफल हो गये। श्रीधाम नवद्वीप-परिक्रमाके समय वर्तमान नवद्वीप शहरमें वहाँके गोस्वामियों तथा स्मार्त्त आदि विरोधी-सम्प्रदायोंने इनको मार डालने के लिये आक्रमण किया; परन्तु भगवान जिसकी रक्षा करते हैं, सारा संसार मिलकर भी उसका बाल बाँका नहीं कर सकता; अस्तु उनका षड्यन्त्र विफल रहा।

धर्म-स्थापन और प्रचार-कार्यको स्थायी बनानेके लिये, विश्वमें तीव्र गतिसे शुद्धभक्तिके प्रचारके लिये इन्होंने सन १६१८ ई० में श्रीगौर-जन्मके पवित्र अवसर पर त्रिदण्ड संन्यास ग्रहण किया। उसी समय उन्होंने मायापुरमें चन्द्रशेखर भवनमें श्रीगुरु-गौराङ्ग और श्रीराधागोविन्द विग्रहको प्रकाश कर विश्व-विश्रुत श्रीचैतन्यमठ और कलकत्तेमें श्रीगौ-ड़ीय मठकी स्थापना की। इन स्थानोंसे ब्रह्मचारियों, वानप्रस्थियों और संन्यासियोंको संघबद्ध कर देश-विदेशमें प्रेरित किया। इन विद्वान और योग्य दलोंने देशके कोने-कोने तथा इंगलैण्ड, जर्मनी, फ्रांस, इटली आदि विदेशोंमें उनकी वाणीका प्रचार किया।

इन्होंने श्रीधाम मायापुरमें मूल आकर मठ श्री-चैतन्य मठ तथा कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, दिल्ली, मथुरा, वृन्दावन, प्रयाग, हरिद्वार, पुरी, वाराणसी, लखनऊ, ढाका, मैमनसिंह, रंगुन और लंदन आदि सैकड़ों स्थानोंमें श्रीगौड़ीय मठ; कन्याकुमारी, पुरी, सोरों आदि अगणित स्थानोंमें श्रीचैतन्यपाद-पीठ और विभिन्न स्थानोंमें भक्तिविनोद-आसन,

गौड़ीय आश्रम आदिकी स्थापना की। वहाँ योग्य-योग्य ब्रह्मचारी और संन्यासियोंको रख कर शुद्ध भक्तिकी वाणीका प्रचार किया।

इन्होंने संसारकी प्रत्येक वस्तुको हरि सेवामें नियुक्त करनेका महान क्रान्तिकारी आदर्श स्थापित किया है। आधुनिक विज्ञानको भी इन्होंने अछूता नहीं रखा। कलकत्ते में 'गौड़ीय प्रिंटिंग प्रेस' कृष्णनगर में 'भागवत प्रेस', कटकमें 'परमार्थी प्रिंटिंग वर्क्स' तथा श्रीधाम मायापुर में 'नदिया प्रकाश यन्त्रालय' रूप वृहद् मृदंग—मुद्रण यन्त्रकी स्थापना की। इन मुद्रण यन्त्रों—वृहद् मृदंगोंके द्वारा बंगला भाषा में 'गौड़ीय', नदिया प्रकाश', हिन्दीमें 'भागवत' उड़ियामें 'परमार्थी', आसामी भाषामें 'कीर्तन', तथा अँग्रेजीमें हारमोनिष्ट या सज्जन तोषिणी—सात विभिन्न भाषाओंमें पारमार्थिक दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक और मासिक पत्रिकाओंको प्रकाशित किया। इन पत्रिकाओं और शुद्ध भक्ति-प्रचारके केन्द्रोंने देश-विदेशके कौने कौनेमें विशुद्ध भक्तिकी वाणीका थोड़े ही समयमें प्रचार होनेमें अपना महत्वपूर्ण योग दिया है।

इतना ही नहीं, इन्होंने प्राचीन ग्रन्थोंके तथा गोस्वामी-ग्रन्थोंके ऊपर सुबोध, प्रसन्न और गम्भीर भाष्य लिखे, उनके अनुवाद किये तथा स्वयं अनेक मौलिक ग्रन्थ लिखे और योग्य शिष्योंको भी प्रेरणा प्रदान कर उनसे भी लिखवाये। उनके कठोर परिश्रम के फल स्वरूप ही आज गौड़ीय-साहित्य भण्डार इतना समृद्ध है।

बालकपनसे ही लोगोंकी रुचि धर्म-पथमें रहे, इसके लिये इन्होंने अनेक विद्यालय, संस्कृत पाठशाला ग्रन्थागार तथा रीसर्च इन्स्टीटयूटकी स्थापना की। विद्यालयोंमें कम्पलसरी धर्म-शिक्षाका प्रवर्त्तन किया। विद्वानोंको भक्ति-प्रचारमें उत्साहित करनेके लिये 'भक्तिशास्त्री', 'सम्प्रदाय-वैभवाचार्य' और 'सार्वभौम' आदिकी परिक्षाओं और उपाधियोंका प्रवर्तन किया। सामूहिक रूपमें प्रचारके लिये धाम-प्राचारिणी-सभा तथा विश्ववैष्णव राजसभाको पुनः प्रकाशित किया तथा विश्ववैष्णव राजसभाके अध्यक्ष निर्वाचित हुए। इन सभाओंके द्वारा जगतका बड़ा उपकार साधित हुआ है। अल्प शिक्षितों, बच्चों और ग्रामीण स्त्री-पुरुषोंमें शुद्धभक्तिके प्रचार के लिये इन्होंने छायाचित्र (Magic lantern) का सहारा लेकर अपनी अत्यन्त गंभीर और युगोपयोगी सूक्ष्म-बूझका परिचय दिया है। अल्प शिक्षित अथवा अशिक्षित समाजमें इन Magic lantern (छायाचित्र) द्वारा प्रदर्शित सत् शिक्षाओंका बड़ा प्रभाव हुआ है। इनके द्वारा प्रवर्त्तित सत् शिक्षा प्रदर्शनियों तथा पारमार्थिक सम्मेलनोंका महत्व भी कम नहीं है।

इन्होंने नवधा भक्ति-स्वरूप नवद्वीप धामके नौ द्वीपोंमें नवधा भक्तिके उपास्य-तत्त्वकी अर्चा-मूर्त्तियों को प्रकाश कर, धाम-परिक्रमाका प्रवर्तन कर, लुप्त तीर्थोंका पुनरुद्धार कर प्राचीन दुर्लभ ग्रन्थों और परमार्थिक पत्रिकाओंका प्रकाशन कर, संन्यासी-ब्रह्मचारियोंको संघबद्ध कर, चातुर्मास्य और कार्त्तिक व्रतोंके पालनका आचरण कर-करा कर, श्रीव्यास पूजा अथवा श्रीगुरु पूजाका पुनः प्रचलन कर, यन्त्र युगमें तन्त्रयुग का आविर्भाव करा कर, हरिनाम-श्रवण-कीर्त्तनकी सर्वश्रेष्ठता प्रमाणित कर, श्रीमन्महाप्रभुके प्रेम-धर्मका विश्वव्यापी प्रचार कर—'पृथिवीते यत आछे नगरादि ग्राम सर्वत्र प्रचार हईबे मोर नाम'—श्रीमन्महाप्रभुकी इस मनोभिलाषाको पूर्ण कर दिया।

नित्यलीलामें प्रवेश (अप्रकट)

इस प्रकार गौर मनोभिष्ट पूर्ण कर १ जनवरी १९३७ ई० शुक्रवारके दिन अपने प्रियजनोंको विरह-सागरमें निमज्जित कर कलकत्ता गौड़ीय मठमें श्री ब्रह्म-माध्व गौड़ीय सम्प्रदायके संरक्षक, श्रीकृष्ण

चैतन्य-आम्नायके नवमाधस्तन ॐ विष्णुपाद १०८ श्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी 'प्रभुपाद' स्वेच्छापूर्वक अपने नित्यधाम श्रीगोलोक वृन्दावनमें श्रीराधाकृष्णकी निशान्तलीलामें प्रवेश कर गये।

रचित और सम्पादित ग्रन्थ-समूह

(क) रचित मौलिक ग्रन्थ—

(१) प्रह्लाद-चरित
(२) श्रीमन्नाथ मुनि
(३) यमुनाचार्य
(४) श्रीरामानुजाचार्य
(५) संस्कृत भक्तमाल
(६) निवेदन
(७) बंगे समाजिकता
(८) ब्राह्मण और वैष्णव
(९) चैतन्यचरितामृका अनुभाष्य
(१०) उपदेशामृतेर अनुवृत्ति
(११) गौर-कृष्णोदय
(१२) नवद्वीप पंजिका
(१३) सज्जन तोषिणी (मासिक पत्रिका) श्री भक्ति विनोद ठाकुरके पश्चात)
(१४) नवद्वीप धाम ग्रन्थमाला
(१५) व्यास पूजाय प्रत्यभिभाषण
(१६) My Durgapuja
(१७) Rai Ramanada
(१८) Relative world
(१९) हरि भक्ति-कल्प-लतिका (बंगानुवादसह)
(२०) पुरुषार्थ-विनिर्णय
(२१) The vedanta, Its morphology and ontology

भाष्य टीका अथवा अनुवादके साथ संपादित ग्रन्थ-समूह

(ख) श्री भक्ति विनोद ग्रन्थावलि—

(२२) अर्चन-पद्धति, (२३) जैव धर्म, (२४) जैव-धर्मका अंग्रेजी अनुवाद, (२५) चैतन्यशिक्षामृत,(२६) चैतन्यशिक्षामृतका अंग्रेजी अनुवाद, (२७) तत्त्व-विवेक, (२८) तत्त्व मुक्तावली, (२९) तत्त्वसूत्र, (३०) हरिनाम चिन्तामणि (३१) Life and Precept of Sri Chaitanya Mahaprabhu, (३२) The Bhagavat, Its Philosophy and theology (३३) शरणागति, (३४) कल्याण कल्पतरु, (३५) गीतावलि, (३६) भजन-रहस्य।

(ग) श्रीभक्ति विनोद ठाकुर कृत भाष्य-टीका अथवा अनुवाद सह प्राचीन ग्रन्थ जिनका सम्पादन और प्रकाशन श्रीसिद्धान्त सरस्वती ने किया है—

(३७) चैतन्योपनिषद्, (३८) ब्रह्म-संहिता, (३९) ब्रह्म संहिताका अँग्रेजी अनुवाद, (४०) प्रेम-विवर्त, (४१) गीता—(बलदेव विद्या भूषण भाष्य और श्रीभक्तिविनोद भाषाभाष्यके साथ (४२) गीता—(विश्वनाथ चक्रवर्ती कृत भाष्य और श्रीभक्ति-विनोद भाषा-भाष्य सह), (४३) सत्क्रिया-सार-दीपिका और संस्कार-दीपिका,

(घ) अन्यान्य संपादित प्राचीन ग्रन्थ-समूह—

(४४) श्रीमद्भागवत (विश्वनाथ चक्रवर्ती कृत टीका और स्वकृत गौड़ीय भाष्य सह)
(४५) श्रीचैतन्यचरितामृत (अमृत-प्रवाह भाष्य और स्वकृत अनुभाष्य सह)
(४६) श्रीचैतन्य भागवत (स्वकृत गौड़ीय भाष्य सह)
(४७) भक्तिसन्दर्भ (स्वकृत गौड़ीय भाष्य सह)
(४८) प्रमेय-रत्नावली (अनुवाद सह)
(४९) सिद्धान्तदर्पणम् (गौड़ीय भाष्य सह)
(५०) चैतन्यचंद्रामृत और नवद्वीपशतकम् (गौड़ीय भाष्य सह)
(५१) वेदान्त तत्त्वसार (बंगानुवाद सह)
(५२) मणि-मंजरी [(जयतीर्थ रचित) बंगा-नुवाद सह]
(५३) सदाचार स्मृति (बंगानुवाद सह)

(५४) चैतन्यभागवत (अंग्रेजी अनुवाद)
(५५) प्रेमभक्ति-चंद्रिका
(५६) चैतन्यमंगल (लोचनदास कृत)
(५७) युक्ति-मल्लिका (बंगानुवाद सह)
(५८) भक्तिरसामृतसिन्धु (मूल)
(५९) ईशोपनिषद (बंगानुवाद सह)
(६०) भक्तिरत्नाकर

(च) प्रकाशित पारमार्थिक पत्रिका-समूह—
(१) बंगला भाषामें–(१) गौड़ीय और (२) दैनिक नदिया प्रकाश
(२) हिन्दी भाषामें–भागवत
(३) उड़िया भाषामें–पारमार्थिक
(४) असमिया भाषामें–कीर्तन
(५) अँग्रेजीमें-Hormonist (सज्जनतोषिणी) (ठाकुर भक्तिविनोदके अप्रकटके पश्चात्से)

(छ) पारमार्थिक पत्रिकाओंके अतिरिक्त—
(१) बृहस्पति or Scientific Indian
(२) ज्योतिर्विद
(३) निवेदन or Sign Board (इसमें इनका कभी कभी लेख प्रकाशित होता था)

इन ग्रन्थोंके अतिरिक्त और भी ग्रन्थ हैं, जिनका इन्होंने सम्पादन और प्रकाशन कर गौड़ीय-साहित्यका भण्डार समृद्ध किया है। स्थानाभावके कारण उनका समुचित उल्लेख नहीं किया जा सका है।

विचार-वैशिष्ट्य

जगत्-कल्याणके लिये युग-युगमें जो भगवत्पार्षद-गण भगवानकी इच्छासे जगत्में आचार्यके रूपमें अवतीर्ण होते हैं, उनका अपना अपना एक-एक मौलिकत्व और वैशिष्ट्य होता है। भगवानके निजजन ॐ विष्णुपाद श्रीभक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामीका अपना एक मौलिकत्व और वैशिष्ट्य विद्यमान रहने पर भी उनमें समस्त पूर्वाचार्योंके समस्त मौलिकत्वों और वैशिष्ट्योंका अपूर्व समावेश लक्ष्य किया जाता है। इनके जीवन-चरित, ग्रन्थों और विचारोंकी सामूहिक रूपमें आलोचना करने पर इनके महान व्यक्तित्व, औलिकक पाण्डित्य, परमोदात्त चरित्र, चतुर्मुखी प्रतिभा और अप्राकृत कृष्ण-प्रेमकी, झलक हमारे नेत्रोंके सामने चमकने लगती है।

आचार्यशंकरका प्रचार-वैशिष्ट्य, श्रीरामानुजाचार्यकी सूक्ष्मातिसूक्ष्म और प्रबल शास्त्रयुक्ति द्वारा मायावाद खण्डनका वैशिष्ट्य, श्रीमध्वाचार्यके सर्व-शास्त्र-प्रमाण-संग्रह द्वारा मायावाद खंडन और स्वमत स्थापनका वैशिष्ट्य,श्रीमध्व सम्प्रदायकेप्रधान नैयायिक पण्डितआचार्यवर श्रीव्यासतीर्थकी खण्डन-मण्डनकी नियुणताका वैशिष्ट्य, श्रीस्वरूप-रूपके प्रेम-भक्ति-प्रकाशका वैशिष्ट्य, श्रीसनातन गोस्वामीके वैधीभक्ति स्थापनका वैशिष्ट्य, श्रीहरिदास ठाकुरकी हरिनाम-निष्ठाका वैशिष्ट्य, श्रीरुपानुग रघुनाथ और श्री गौरकिशोरदासके अप्राकृत कठोर वैराग्यका वैशिष्ट्य, ठाकुर नरोत्तमका दैव वर्णाश्रम स्थापना एवं कीर्त्तनाख्या भक्ति प्रचारका वैशिष्ट्य, श्रीजीव गोस्वामीके सर्व-शास्त्र पारदर्शिता, अतुलनीय पाण्डित्य तथा विरोधी मतवादोंका खण्डन कर श्रीचैतन्य प्रदर्शित शुद्ध भक्ति-धर्म संरक्षणका वैशिष्ट्य, श्रीविश्वनाथ चक्रवर्तीके सरस पाण्डित्यका वैशिष्ट्य एवं श्रीबलदेव विद्याभूषणकी अखिल वेदान्त-पारदर्शिताका वैशिष्ट्य—इन सबका अपूर्व समावेश देखा जाता है—आचार्य केशरी श्रीभक्ति सिद्धान्त सरस्वतीमें।

उन्होंने वेद-विद्वेषी नास्तिक चार्वाक, जैन और बौद्ध मतोंका; सांख्य, योग, न्याय और वैशेषिक आदि अर्द्ध नास्तिक मतोंका एवं प्रच्छन्न बौद्ध शङ्करके मायावादका खण्डनकर वेदके एक देशीय विशिष्टाद्वैतवाद, द्वैतवाद, शुद्धाद्वैतवाद, एवं द्वैताद्वैतवाद—इन मतोंके अपूर्व समन्वय-स्वरूप स्वयं भगवान

श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रदर्शित वेदके सर्वदेशीय विचार—'अचिन्त्यभेदाभेद' का संसारमें प्रचार और प्रतिष्ठा कर सार्वभौम आचार्यत्वका परिचय दिया है।

गौतम बुद्ध, आचार्यशङ्कर और श्रीरामानुजाचार्य प्रमुख आचार्योंने बड़े-बड़े राजाओंकी सहायतासे, दिग्विजयी पण्डित शिष्योंकी सहायतासे जो प्रचार-कार्य किये हैं, आचार्य भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामीने उनसे भी अधिक प्रचार-कार्य विना किसी राजा-आदिकी सहायतासे ही कर दिखाये हैं। उक्त आचार्योंके प्रचार-कार्यके लिये तात्कालीन राजाओं का सम्पूर्ण राज-कोष उन्मुक्त रहता था। परन्तु श्रीभक्तिसिद्धान्त सरस्वतीने इतना बड़ा विश्वव्यापी प्रचार केवल अपने ब्रह्मचारियों और संन्यसियोंके संग्रहीत मुट्ठी-भिक्षा द्वारा ही सम्पादन किया है। यह श्रीभक्तिसिद्धान्त सरस्वतीके आचार्यत्वका एक प्रधान वैशिष्ट्य है। उनका कहना था कि सांसारिक अर्थ होनेसे ही भगवत्-सेवा और प्रचारका कार्य नहीं होता, उसके लिये निर्बन्धिनी मति और अकपट सेवामय प्राणकी आवश्यकता होती है।

इनके जीवनका प्रधानलक्ष्य था—बहुरूपी मायावादके कुसिद्धान्तरूप जंगलको परिष्कार कर वहाँ शुद्धभक्तिका मंदिर स्थापन करना। निरपेक्ष सत्यकथाके प्रचारमें श्रीभक्ति सिद्धान्त सरस्वतीकी असामान्य निर्भिकता, अतुलनीय ऐकान्तिकता, अदम्य उत्साह एवं नैरन्तर्यमयी चेष्टा देखी जाती थीं। उनके जीवनमें सैकड़ों बार ऐसा देखा गया है कि जागतिक दृष्टिसे विराट धनी और जड़ प्रतिष्ठाके उच्च शिखर पर अवस्थित व्यक्तियोंकी मनोस्तुष्टिके लिये उन्होंने कभी भी सत्यका गला नहीं घोटा। निरपेक्ष सत्यका निर्भिक प्रचार उनके चरित्र-वैशिष्ट्यका मेरुदण्ड है।

अक्लान्त भावसे निरन्तर हरि-कथाका कीर्तन करना इनके जीवनका एक और वैशिष्ट्य था। कभी-कभी भोजन, शयन, विश्राम, सब कुछ भूलकर आठ-आठ, दस-दस घन्टे लगातार हरि-कथाका कीर्तन करते इन्हें देखा गया है। हरि-कथा कीर्तनमें तनिक भी बाधा देने पर वे अत्यन्त असन्तुष्ट हो जाते थे।

Ontology and morphology (काया और छाया) का विचार; प्रत्यक्ष, परोक्ष, अपरोक्ष, अधोक्षज और अप्राकृत साध्य-साधनका तारतम्य विचार; फल्गु और युक्त वैराग्यका विचार—इन महापुरुषके मौलिक दान हैं—भारतीय धर्मजगतमें।

उनका यह भी एक और वैशिष्ट्य था कि अपने अनुगतजनोंमें जभी कोई भक्ति-विरुद्ध थोड़ा भी दोष देखते थे, उसी समय वे उसका कठोर प्रतिवाद करते थे; चाहे वह अपना कितना भी प्रिय क्यों न हो और उसका संशोधन करवानेका प्रयत्न करते थे। उनके कठोर शासनसे कोई असन्तुष्ट होगा अथवा दुःखित होगा—ऐसा सोच कर वे अपने मङ्गलमय कठोर शासनसे उसे कभी वंचित नहीं करते थे।

श्रीचैतन्यमहाप्रभुका प्रचारित मत ही इनका मत है जो संक्षेपमें इस प्रकार है—

(१) आम्नाय वाक्य अर्थात् गुरुपरम्परासे चलते आ रहे वेद और उनके अनुगत श्रीमद्भागवत् और गीता आदि ही मुख्य-प्रमाण हैं।

(२) श्रीकृष्ण-स्वरूप श्रीहरि ही परम तत्त्व हैं।

(३) वे सर्वशक्तिमान हैं। उनकी पराशक्ति एक होने पर भी उसके त्रिविध प्रकाश हैं—चित शक्ति, जीव (तटस्थ) शक्ति, और अचित् (जड़) शक्ति; पराशक्तिके और भी तीन प्रकारके प्रकाश हैं—शम्वित् शक्ति, सन्धिनी शक्ति तथा ह्लादिनी शक्ति। चित-अचित सभी कुछ शक्तिका ही परिणाम है।

(४) वे अखिल रसामृत सिन्धु ।

(५) बद्ध और मुक्त दोनों प्रकारके जीव उनकी जीवशक्ति द्वारा प्रकाशित विभिन्नांश तत्त्व हैं, संख्यामें अनन्त और अणु-चैतन्य हैं ।

(६) तटस्थ धर्मवशतः बद्धजीव मायाके बन्धनमें है ।

(७) मुक्त जीव मायासे मुक्त हैं ।

(८) चित और अचित समस्त विश्वका श्रीहरिसे युगपत् भेद और अभेद है । अर्थात् चित-अचित समस्त विश्व भगवान्‌का अचिन्त्यभेदाभेद प्रकाश है ।

(९) भक्ति ही जीवका साधन है । नाम-संकीर्तन ही सर्वश्रेष्ठ भक्ति है ।

(१०) शुद्ध कृष्णप्रेम ही जीवका एकमात्र प्रयोजन है ।

ये सिद्धान्त ही निखिल वेद-वेदान्त, उपनिषद् और सात्वत पुराणोंके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त हैं ।

जिस अनर्पितचर कृष्ण-प्रेमका दान कर और कृष्ण नाम-संकीर्तनका प्रचार कर स्वयं भगवान् श्रीचैतन्यदेव 'महावदान्य अवतार' कहलाते हैं, श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रकटित उसी कृष्ण-प्रेमका दान कर तथा कृष्ण नाम-संकीर्तनका प्रचार कर श्रीगौरहरिके निजजन-श्रीभक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी आचार्य कुल तिलक और 'महावदान्य-आचार्य' हैं, इसमें सन्देह ही क्या है ? श्रीरूप गोस्वामीने उपदेशामृतमें, श्रीरघुनाथदास गोस्वामीने स्तवावलीमें, ठाकुर नरोत्तमने 'प्रार्थना' और प्रेम-भक्तिचन्द्रिकामें तथा ठाकुर भक्तिविनोदने गीतावली और गीतमालामें श्रीमन्महाप्रभुके जिस अनर्पितचर अप्राकृत दानका कीर्तन किया है उसे श्रीभक्तिसिद्धान्त सरस्वतीने सुदृढ़ वैज्ञानिक विश्लेषण प्रदर्शन कर कीर्तन द्वारा संसारमें वितरण कर, पूर्वाचार्योंका विचार परिस्फुट किये हैं । ये श्रीरूपानुगवर श्रीभक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर आचार्यकुलतिलक और महावदान्य-आचार्य है, इसमें सन्देह ही क्या है ?

श्रीसरस्वती ठाकुरने कर्मकाण्ड द्वारा मिलनेवाली भुक्ति, निर्विशेष ज्ञान द्वारा प्राप्त होनेवाली मुक्ति तथा अष्टाङ्ग योग द्वारा पायी जानेवाली सिद्धिकी अभिलाषाओंको शास्त्र-युक्ति और प्रमाणके बल पर निःसार प्रमाणित कर दिया है । इनके प्रत्येक गद्य और प्रत्येक गद्यकी प्रत्येक पंक्तिमें मायावादका खण्डन देख कर कोई भी आलोचक बिना मुग्ध हुए नहीं रह सकता है । इतना ही नहीं भक्ति साधकोंको सावधान करनेके लिये इन्होंने सूक्ष्मातिसूक्ष्म विचारोंके द्वारा विश्लेषण कर यह दिखलाया है कि केवल कर्म-ज्ञान-योगके अनुष्ठानोंमें ही नहीं अपितु श्रवण, कीर्तन और अर्चन आदि भक्ति-अनुष्ठानोंके पर्देमें भी भोग, मोक्ष और सिद्धिकी कामना किस प्रकारसे प्रवेश कर जाती है और साधकको अधपतित कर देती है । भक्तिका ऐसा शुद्ध और सूक्ष्म विचार कहीं भी अन्यत्र दुर्लभ है ।

इन्होंने पांचरात्र-विधिसे मठ-मन्दिर और भगवान् की अर्चामूर्त्तियोंकी प्रतिष्ठा कर वहाँ भागवत् विधिके अनुसार व्यवधान-रहिता भगवन्नाम-रूप-गुण-परिकर-लीलाके श्रवण और कीर्तनरूप कीर्तनाख्या भक्तिकी व्यवस्था कर पंचरात्र और भागवत—इन दोनों पथोंका अपूर्व समन्वय कर श्रीमन्महाप्रभुकी रूप-शिक्षाका ज्वलंत आदर्श स्थापित किया है—यह भी इनके चरित्रका प्रधान वैशिष्ट्य है ।

आचार्यकुल शिरोमणि श्रीभक्ति सिद्धान्त सरस्वती ने जगत-कल्याणके लिये जो कार्य किये हैं, उसके लिये संसार इनका चिर ऋणि है । वे श्रीगौरवाणीके साक्षात् मूर्त्तिमान-विग्रह-स्वरूप हैं, अन्यथा इतने दीर्घकाल साध्य कार्योंका सम्पादन इतने अल्पकालमें करना सर्वथा असम्भव होता । हम उनकी अप्राकृत वाणीका अनुशीलन करें, उनकी वाणीके माध्यमसे परतत्त्व वस्तुका साक्षात्कार करें, उनकी वाणीका अनुशीलन कर अपना जीवन सार्थक करें, उनकी वाणीका विश्वमें सर्वत्र प्रचार करें—श्रीगौरवाणीके

मूर्त्तिमान विग्रह, अप्राकृत सरस्वती ॐ विष्णुपाद १०८ श्रीश्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामीके श्रीचरण-कमलोंमें हमारी यही यथार्थ पुष्पाञ्जलि होगी।

नमस्ते गौरवाणी मूर्त्तये दीनतारिणे।
श्रीरूपानुगविरुद्धापसिद्धान्तध्वान्तहारिणे॥

—सम्पादक

❀ श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः ❀

निमंत्रण-पत्र

श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति

श्रीदेवानन्द गौड़ीय मठ
तेघरिपाड़ा, पो० नवद्वीप,
(नदीया)

सादर सम्भाषणपूर्वक निवेदन—

कलियुग-पावनावतारी स्वयं भगवान् **श्रीश्रीशचीनन्दन गौरहरि** की निखिल भुवन-मङ्गलमयी **आविर्भाव तिथि-पूजा** (फाल्गुनी पूर्णिमा) के उपलक्ष्य में **श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति** के उद्योग से उपरोक्त ठिकाने पर आगामी २४ फाल्गुन = मार्च, मङ्गलवार से ३० फाल्गुन, १४ मार्च, सोमवार पर्यन्त सप्ताहकालव्यापी एक **विराट महोत्सव** का अनुष्ठान होगा। इस महदनुष्ठानमें प्रतिदिन प्रवचन, कीर्त्तन, वक्तृता, इष्ट-गोष्ठी, श्रीविग्रह-सेवा, **महाप्रसाद वितरण** प्रभृति विविध भक्त्यङ्ग याजित होंगे।

इस उपलक्ष्य में श्रीश्रीनवद्वीपधाम के अन्तर्गत नौ द्वीपों का दर्शन तथा तत्तत्स्थान-माहात्म्य-कीर्त्तन एवं नगर संकीर्त्तन करते हुए **सोलह-क्रोस की परिक्रमा** होगी। गत वर्ष की तरह इस वर्ष भी **श्रीनृसिंहपल्ली, चाँपाहाटी, मामगाछी एवं श्रीधाम मायापुर में शिविरादि** में वास कर निशि-यापनपूर्वक परिक्रमा करने की सुव्यवस्था की गई है।

धर्मप्राण सज्जन-वृन्द उक्त भक्ति-अनुष्ठान में सबान्धव योगदान कर समिति के सदस्य-वर्ग को परमानन्दित एवं उत्साहित करेंगे। इस महदनुष्ठान का गुरुत्व उपलब्धि कर प्राण, अर्थ, बुद्धि और वाक्य द्वारा समिति के सेवाकार्य में सहानुभूति प्रदर्शन कर अनुगृहीत करेंगे। इति १ फरवरी, १९६०

शुद्धभक्त-कृपालेश-प्रार्थी—
"सभ्यवृन्द"
श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति।

द्रष्टव्य—विशेष विवरणके लिये अथवा सहायता (दानादि) देनेके लिये **त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्ति-प्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज के** निकट उपर्युक्त ठिकाने अथवा श्रीउद्धारण गौड़ीय मठ, चौमाथा चिनसुरा (हुगली) के ठिकाने पर लिखें या भेजें।

श्रीश्रीव्यासपूजा या श्रीश्रीगुरुपूजा

[जगद्गुरु ॐविष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी 'प्रभुपाद' की आविर्भाव-तिथि-पूजाके उपलक्ष्यमें आयोजित विराट सभामें तदीय मनोभीष्ट पूरणकारी तत्पार्षदवर ॐविष्णुपाद १०८ श्रीश्रीमद्भक्ति प्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज द्वारा दिये गये भाषणसे]

प्रत्येक वर्ष मैं श्रीव्यास-पूजाके समय आपलोगोंका आह्वान करता हूँ और इस विषयमें आपलोगोंके निकट बहुत कुछ निवेदन कर चुका हूँ। श्रीव्यासपूजा क्या है? यह जानना हमारा सबसे पहला कर्त्तव्य है। श्रीव्यासपूजासे केवल मात्र श्रीकृष्ण द्वैपायन वेदव्यासकी पूजाका ही बोध नहीं होता, अपितु उससे गुरुवर्गकी पूजाका भी बोध होता है। आजसे लगभग ४७३ वर्ष पूर्व श्रीचैतन्य महाप्रभुने श्रीनित्यानन्द प्रभुके द्वारा श्रीवास अंगनमें इस व्यासपूजाका प्रचलन किया था। उसके पश्चात् श्रीमद्भक्ति सिद्धान्त सरस्वती ठाकुरने समग्र भारतके श्रीगौड़ीय वैष्णव-समाजमें श्रीव्यासपूजाका पुनः प्रवर्तन किया है। हम शंकर सम्प्रदायमें भी व्यास-पूजाका प्रचलन लक्ष्य करते हैं। परन्तु वह व्यास पूजा यथार्थ व्यासपूजा न होकर केवल बनावटी पूजा मात्र है।

हम अपने पूज्यवस्तुकी पूजा करते हैं और उन्हें भ्रम-प्रमादादि समस्त प्रकारके दोषोंसे रहित जानकर उनकी शिक्षाओं और उपदेशोंका पालन करते हैं। जहाँ पूज्यवस्तुमें भ्रम-प्रमादादि दोष हैं—ऐसा विचार अथवा संशय विद्यमान है, वहाँ पूज्य-बुद्धि कहाँ रही? श्रीकृष्णदास कविराजने आचार्य शंकरके सम्बन्धमें लिखा है—'व्यास भ्रान्त बलि' सेई सूत्रे दोष दिया। विवर्तवाद स्थापियाछे कल्पना करिया॥ (चै. च, म-६।११२) अर्थात् शङ्कराचार्यने व्यासदेवको भ्रान्त बतलाकर स्वयं कल्पना द्वारा विवर्तवादकी स्थापना की है। मैं श्रीव्यासजीको मानता हूँ, उनकी पूजा भी करता हूँ; परन्तु उनके विचारोंको स्वीकार नहीं करता—ऐसी बात असंभव है।

श्रीगुरुदेव और श्रीव्यासदेवको मरणशील मनुष्य मानना तथा उनमें संदेह होना—ये दोनों बातें जीवकी अधोगतिके कारण है। इसीलिये शास्त्रोंने हमें सावधान किया है—"न मर्त्यबुद्ध्या असूयेत सर्वदेवमयो गुरुः", "संशयात्मा विनश्यति।" शंकरने स्वयं व्यासको भ्रान्त कहा है। अतएव जो व्यासदेवके विचारोंको भ्रान्त समझते हैं, उनके लिये व्यासपूजा एक विडम्बनामात्र है।

अस्तु, हमें सबसे पहले श्रीव्यासका अनुगत होना होगा तथा उनकी वाणी और शिक्षाका विश्वमें प्रचार करनेके लिये व्रत-ग्रहण करना होगा। शुद्ध रूपमें श्रीव्यास पूजाका प्रचलन होनेसे हमारा कल्याण होगा। आप लोग श्रीव्यासके अनुगत हों और श्रीव्यास पूजामें आत्मनियोग करें। देखेंगे, थोड़े ही दिनोंमें आपके सारे दुःख दूर हो जायेंगे, समस्त प्रकारके अभाव मिट जायेंगे और संसारके समस्त अमंगल विदूरित हो जायेंगे।

कुछ लोगोंका कहना है कि धर्मके साथ समाज-नीति, राष्ट्रनीति और अर्थनीतिका कोई सम्बन्ध नहीं है। अतएव धर्मपालनसे हमारे अभाव कैसे दूर हो सकते हैं? इससे हमारी रोटी और कपड़ेकी समस्या कैसे हल हो सकती है? इससे हमारी राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओंका समाधान कैसे हो सकता है? इत्यादि। मैं कहता हूँ—आप लोग श्रीव्यास लिखित शास्त्रोंके अनुसार आचरण करें, देखेंगे विश्वकी समस्त प्रकारकी जटिल समस्यायोंका अपने आप समाधान हो जायगा। श्रीव्यासदेवके बतलाये हुए मार्गको छोड़ कर मनमाने धर्मका पालन करनेसे कोई

कल्याण होना तो दूर रहे, नयी-नयी समस्याएँ ही सामने आयेंगी। धर्म-पालनमें समाजनीति, राजनीति और अर्थनीति, इनमें कोई भी नीति नहीं छूटती। वरन् ये सभी आपके अनुकूल हो जायेंगी।

और भी कुछ लोग यह कहते हैं कि—प्राचीन शास्त्रकी पोथियाँ वर्त्तमान कालोपयोगी नहीं हैं। धर्म, कर्म और शास्त्र-ग्रन्थोंका युगोपयोगी रूप में गठन करना होगा। भागवत, पुराण आदि ग्रन्थों की भाषामें, भावमें आवश्यक काट-छाँट संशोधन और परिवर्त्तन करनेकी आवश्यकता है। परन्तु ये लोग यह भूल जाते हैं कि भगवत् शक्त्यावेशावतार त्रिकालदर्शी शास्त्रकार श्रीव्यासदेव द्वारा रचित शास्त्र ग्रन्थोंमें सर्वदेशीय, सर्वकालिक समस्त प्रकारकी समस्याओंका निश्चित समाधान दिया गया है। वे सामाजनीति, राजनीति, अर्थनीति आदि समस्त विषयोंमें पारंगत थे। उनके द्वारा रचित असंख्य शास्त्र-ग्रन्थोंमें उन्होंने इन विषयोंकी प्रचुर आलोचना की है तथा उनकेसम्बन्धमें उपदेश भी दिये हैं। वर्त्तमान समयमें बृटिश और भारतीय शासन तन्त्रमें जो फौजदारी और दीवानी कानून व्यवस्था है, वह हमारे प्राचीन संहिता-ग्रन्थोंसे ही ली गयी है। इसके अतिरिक्त छन्द, व्याकरण, कल्प ज्योतिष, विज्ञान, आयुर्वेद आदि हमारे सनातन धर्मकी ही देन हैं। आज भी जिनके बल पर ज्वार-भाँटा, सूर्य-ग्रहण आदि निरुपण करनेमें सक्षम हैं, नाना-प्रकारकी लताओंसे, गुल्मोंसे, जड़ी-बूटियोंसे औषधि प्रस्तुत कर प्राण रक्षा कर रहे हैं—वह सब कुछ आर्य-ऋषियोंका ही दान है। पाश्चात्य देशोंमें आजकल जिस विज्ञानकी उन्नति देखी जा रही है, वह श्रीव्यासकी पुरानी-पोथियोंके आधार पर ही आविष्कृत है। आधुनिक विज्ञानके ग्रन्थ-समूह व्यासकी पुरानी पोथियोंके भाषान्तर मात्र हैं। पुरानी बातोंको नये ढंगसे कह कर ही आज लोग वाह-वाही लूट रहे हैं। हमारे सनातन धर्ममें किसी बातकी कमी नहीं है। हमारे शास्त्रकार महर्षियों और राजर्षियोंने बड़ी योग्यता और कुशलतासे राज्यपालन किये हैं उनमें किसी भी विद्याका अभाव न था। आधुनिक पाश्चात्य शिक्षित नास्तिक पण्डिताभिमानी स्वदेश-प्रेम-रहित व्यक्ति ही पाश्चात्य-शिक्षाको गौरवकी दृष्टिसे देखते हैं—यही उनकी पराधीनता है। वे कहते हैं—'धर्म-धर्म चिल्लानेसे काम नहीं चलेगा। धर्म द्वारा हमारी समस्याओंका समाधान नहीं हो सकता। बीसवीं शताब्दीमें धर्मका कोई स्थान नहीं है। वर्त्तमान कालमें भारतको समृद्ध बनानेके लिये उपयुक्त कर्मवीरोंकी आवश्यकता है।' परन्तु राष्ट्रका नैतिक-चरित्र गिर जाने पर दुर्नैतिक धर्महीन राष्ट्र कभी भी टिक नहीं सकता है। धर्महीन राष्ट्रमें सुख और शान्ति संभव नहीं है—यह बात पाश्चात्य शिक्षा के दलालोंके मस्तिष्कमें प्रवेश नहीं करती। धर्म ही भारतका अस्तित्व है, धर्मही भारतका गौरव है, धर्म ही भारतका शान्तिदाता है और धर्मशास्त्र रचयिता श्रीव्यासदेवही समस्त विषयोंमें भारतके पथ-प्रदर्शक हैं—यह बात भारतवासी जिस दिन उपलब्धि करेंगे, उसी दिन भारतकी दासता छूट सकेगी, उसी दिन भारत समृद्ध हो सकेगा तथा उसी दिन पराशान्तिकी खबर पा सकता है, उसके पहले नहीं। धर्म ही भारत का वैशिष्ट्य है। इसीलिये ईसाई धर्मावलम्बी Revered Bishop भी स्वीकार करनेके लिये बाध्य हुए हैं कि—'India Guided by God can lead the world back to sanity' अतः मैं सभीको श्रीव्यासानुगत्यमें सनातन धर्मका अनुशीलन करनेके लिये अनुरोध और आह्वान करता हूँ। केवल आप लोगोंको ही नहीं, अपितु समग्र विश्ववासीको सनातन धर्म ग्रहण कर नित्य-कल्याण प्राप्त करने लिये आह्वान करता हूँ।

श्रीव्यासदेव ही इस सनातन धर्म-पद्धतिके मूल नियामक हैं। वे समग्र जगत्के कल्याणके लिये लाखों श्लोकोंकी रचना कर गये हैं। मेरे गुरुदेव श्रीप्रभुपादने जिनकी आविर्भाव तिथिके उपलक्ष्यमें हम लोग एकत्रित हैं—श्रीव्यासपूजा पद्धतिका संग्रह

किया है जिसका श्रीभक्ति-विनोदने संशोधन भी किया है। वर्तमान समयमें उस पद्धतिके प्रचुर प्रचारकी आवश्यकता है। जिस किसी कारणसे क्योंन हो, उनके प्रकट कालमें उक्त पद्धति प्रचलित और अनुष्ठित नहीं हो सकी। सबसे पहले कुछ वर्ष पूर्व श्रीउद्धारण गौड़ीय मठसे ही उक्त पद्धतिके अनुसार पूजा-पंचक और तत्त्व-पंचककी पूजाका प्रचलन हुआ है।

श्रीव्यास पूजा-पद्धतिमें अधोक्षज-सेवाका सुन्दर वैशिष्ट्य संरक्षित है। मायावादी और अधोक्षज-सेवककी आभ्यंतर निष्ठामें आकाश-पातालका अन्तर है। मायावादियोंके संगसे छुटकारा प्राप्त कर अधोक्षज-सेवाकी प्राप्तिके लिये ही प्रभुपादने सनातन व्यासपूजाका आचारण किया है एवं उसका प्रचार भी किया है। प्रत्यक्ष, परोक्ष और अपरोक्ष ज्ञान—ये मनोधर्मकी सीमाके भीतर हैं। और अधोक्षज सिद्धान्तसे आत्मधर्म प्रारम्भ हुआ है। अधोक्षज सिद्धान्तमें जड़ कर्म-भाव तथा निर्विशेष भाव—इनका प्रवेश नहीं है। अधोक्षज-वस्तु पाँच तत्त्वोंमें क्रमविकाशके रूपमें प्रकाशित हैं—(१) अर्चा, (२) अन्तर्यामी, (३) वैभव, (४) व्यूह और (५) पर पंचोपासक यह समझते हैं कि निर्विशेषके अनेक रूप कल्पित हो सकते हैं। परन्तु कनिष्ठाधिकारी वैष्णव श्रीगुरुदेवके निकट यह श्रवण करनेका सौभाग्य प्राप्त होता है कि ब्रह्मका अनेक रूप नहीं हो सकता है। एकमात्र अधोक्षजके ही अनेक अधोक्षज नित्य एवं स्वरूपसिद्ध रूप वर्त्तमान हैं। अधोक्षज वस्तु या विष्णुके अनेकरूप विद्यमान रहने पर भी अधोक्षज कृष्णका कृष्णत्व ठीक ही रहता है। निर्विशेष ब्रह्मका अनेक रूप कल्पित होनेसे ही पंचोपासना या मायावाद उपस्थित हो जाता है। अधोक्षज पूजापंचक ही इस मायावाद और पंचोपासनासे जीवकी रक्षा करते हैं।

पूजापंचकसे कोई स्मार्त-पंचोपासना न समझ ले। पंचोपासना कर्ममार्गके अन्तर्गत है। ज्ञानी-सम्प्रदायने भी पंचोपासना और पूजापंचक स्वीकार किया है। परन्तु भगवद्भक्तजन एक मात्र पूजापंचक को ही व्यासके अनुगत स्वीकार करते हैं। उसमें कृष्णपंचकका उल्लेख रहनेसे पाँच कृष्णका बोध नहीं होता —कृष्ण तत्त्व-पंचकका बोध होता है। व्यास पूजा-पद्धतिमें कृष्ण-पंचकके अर्थमें श्रीकृष्ण स्वयं, वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध—इस चतुर्व्यूह-का उल्लेख है। ये सभी तत्त्वतः कृष्ण हैं। तत्त्व-पंचककी पूजाके सम्बन्धमें श्रीमन्महाप्रभुके अनुगत सभी पंचतत्त्वकी पूजापद्धतिको विशेषरूपसे जानते हैं। अतएव इस सम्बन्धमें अधिक कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं है। श्रीव्यास-पूजा-पद्धतिमें कृष्ण पंचककी पूजाका वैशिष्ट्य यह है कि सेव्य-तत्त्वकी पूजाके बिना केवल मात्र सेवक तत्त्वकी पूजा शास्त्र विदित नहीं है, दूसरी तरफ सेवक तत्त्वको छोड़कर केवल मात्र सेव्यकी पूजा भी शास्त्रानुमोदित नहीं है। इसीलिये शंकर-सम्प्रदायने भी श्रीव्यासदेवके उपास्य या सेव्य कृष्णपञ्चककी पूजाको स्वीकार किया है। आचार्य शंकरने यद्यपि पंचोपासनाका प्रचार किया है, तथापि व्यास-पूजाके क्षेत्रमें उन्होंने कृष्णको ही व्यासका उपास्य माना है। इससे प्रमाणित होता है श्रीकृष्ण ही स्वयं भगवान और मूल पुरुष हैं—श्रीव्यासदेवका यही मत है। यही नहीं, व्यासदेवने डंकेकी चोटसे इस तथ्यका प्रचारभी किया है—'कृष्णस्तु भगवान स्वयम्।'

हिन्दी आजकल राष्ट्रभाषा होने जारही है। परन्तु यदि संस्कृत राष्ट्र भाषा होती तो क्या राजनैतिक, धार्मिक, क्या सामाजिक-किसी भी दृष्टिकोणसे कोई हानि नहीं होती, वरन लाभ ही लाभ होता। लाभ यह होता कि सब लोग अनिवार्यरूपमें श्रीकृष्णद्वैपायन द्वारा रचित प्राचीन संस्कृत शास्त्रोंका अध्ययन कर अपनी भूल-धारणाओंका संशोधन करनेका अवकाश पाते, साथ ही हमारी प्राचीन संस्कृति और अनेक प्राचीन तथ्योंका पुनरुद्धार भी होता। संस्कृत